ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

शैलेश मटियानी का जीवन परिचय: एक अध्ययन

सुरेन्द्र कुमार, शोधार्थी, हिन्दी विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरुक्षेत्र

प्रोफेसर डॉ. कामराज सिन्धु, हिन्दी विभाग, दूरवर्ती निदेशालय, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरुक्षेत्र

शैलेश मटियानी का जन्म उत्तराखंड राज्य के अल्मोड़ा जनपद में अल्मोड़ा शहर से 18 किमी0 दूर पट्टी तल्ला लखनपुर के एक सुदूरवर्ती क्षेत्र बाड़ेछीना में 14 अक्टूबर सन् 1931 ई. को हुआ। "उनके बचपन का नाम रमेश चन्द्र सिंह मटियानी था। इनके पिता का नाम श्री बिसन सिंह मटियानी एवं माता का नाम श्रीमती लक्ष्मी देवी था। इनके दादा जीत सिंह मटियानी तथा दादी डोटी प्रदेश के चन्द वंश की क्षत्राणी थी"[1] शैलेश मटियानी के पूर्वज बाड़ेछीना से 7 मील दूर मटेना गाँव के मूल निवासी थे, मटेना गाँव के होने के कारण लोग इन्हें 'मट्याणी' कहने लगे। मट्याणी रूप ही बाद में बदल कर मटियानी हो गया। शैलेश मटियानी जी का संयुक्त परिवार था, जिसमें दादा-दादी, चाचा-चाची सभी रहते थे। "1939-40 ई. में इनके पिता ने एक ईसाई महिला से विवाह कर लिया और उसी के साथ बाड़ेछीना से 35 मील दूर बेरीनाग के पास एक ईसाइयों के गाँव में रहने लगे। एक ओर पिताजी का घर छोड़कर चले जाना तथा दूसरी ओर कैंसरग्रस्त माँ का पिता द्वारा तिरस्कृत होने पर इनके सिर पर विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा। मटियानी जी को माँ की सेवा के साथ-साथ घर के सभी कार्य करने पड़ते थे, जिस कारण शिक्षा के द्वार भी बंद हो गए। इनके पिता ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था, फिर भी वे कभी-कभार इनसे मिलने आते थे।"[2]

इनके पिता के ईसाई महिला से तीन बच्चे भी थे। ईसाई धर्म स्वीकार कर लेने के बाद भी इनके पिता की अंतिम इच्छा थी कि उनका अन्तिम संस्कार वैदिक रीति से पुत्र रमेश द्वारा किया जाए। इसी कारण तेरह वर्ष की अवस्था में ही इनका यज्ञोपवीत संस्कार कर दिया गया। इसी बीच मटियानी जी के पिता का निधन हो गया और माँ असाध्य रोग के कारण अन्तिम साँसें गिन रही थी। ''पिता की मृत्यु के कुछ समय बाद ही माँ की भी मृत्यु हो गयी। इनके पास घर में रूकने का एक मात्र सहारा दादी ही थी, जो इन्हें बहुत प्यार करती थी।''[3] माता-पिता की मृत्यु के पश्चात् इनकी स्थिति घर में नौकरों जैसी हो गयी, जिसकी पुष्टि मटियानी जी के इस कथन से होती है -''सुबह उठकर नौले पानी भरने जाना, लौटकर गाय, भैंस दुहना, गोठों

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

का पर्स निकालना, कलेवा करके गाय बकरियों को लेकर सेलना, धनधार या सोंलखेत बनी की ओर निकल जाना, कुल्हाड़ी-दरांती सदैव मेरे पास रहती थी और जब घर लौटता था तो घास या लकड़ी का गट्ठर मेरे सिर पर रहता था।''[4]

चारों ओर विपरीत स्थितियाँ होने के पश्चात् भी कुछ ऐसी अदृश्य प्रेरणा एवं स्वयं के प्रति आस्था थी, जो उन्हें टूटने से बचा रही थी, और उनका हृदय किसी गहरे चिन्तन की ओर उन्मुख हो रहा था। चाहे वह आस-पास की प्रकृति से आत्मीयता हो या पशु-पक्षी से स्नेह, तत्पश्चात् कक्षा चार तक की पढ़ाई करने के दो साल बाद 1945 ई. में बाड़ेछीना में ही प्राइमरी विद्यालय में मिडिल की कक्षा आरम्भ हुई। वहाँ के हेडमास्टर श्री लक्ष्मण सिंह गैलाकोटी जी के कहने पर इन्होंने कक्षा 5 में नाम लिखवाया और उन्हीं की प्रेरणा व स्नेह से अपनी व्यस्त दिनचर्या में से अध्ययन के लिएसमय निकालते रहे। अध्ययन के साथ-साथ वे ग्रामीण अँचलके सांस्कृतिक कार्यक्रमों - रामलीला आदि में भी सक्रिय भाग लेते रहे और कक्षा सात भी पास कर लिया तत्पश्चात् उन्होंने राजकीय इण्टरमीडिएट कॉलेज अल्मोड़ा में कक्षा आठ में प्रवेश ले लिया। ये अपने भाई चन्दन के साथ चाचा के घर में रहने लगे, दोनों भाई पूरी लगन से अपने चाचा के कार्यों में सहयोग करते थे तथा उन्हें चाचा के साथ गोश्त की दुकान में भी काम करना पड़ता था। इस प्रकार उन्होंने विषम परिस्थितियों का सामना करते हुए 1951 में हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की। विद्यालय के अध्यापकों द्वारा उन्हें विशेष प्रेरणा व सहानुभूति मिलती रही, जिसके बल पर वे आगे बढ़ते रहे और यहीं से इनके जीवन का नया अध्याय शुरु होता है।

अपने चचेरे भाई जंग बहादुर मटियानी (जो उस समय नौ सेना में कार्यरत थे) की कुछ रचनाएँ नेवी की पत्रिका में पढ़कर इनके मन में लिखने की इच्छा जागृत हुई, 1950 ई. से इन्होंने 'शैलेश' के नाम से लिखना शुरु कर दिया था। हिमालय के प्रति विशेष मोह व आकर्षण से इन्हें 'शैलेश' नाम बेहद पसंद आया।

पारिवारिक दुष्प्रभाव के कारण स्थानीय पत्रिकाओं में इनकी रचनाएँ नहीं छप सकी वरन् इन्हें जुआरी और बूचड़ के परिवार से संबंधित होने के कारण तिरस्कार और अपमान सहन करना पड़ा, फिर भी वे अपने लेखन कार्य से विचलित नहीं हुए और 1950 ई. में 'शांति ही जीवन है' तथा 'संघर्ष के क्षण' दो कहानियाँ लिखी। ये दोनों ही कहानियाँ ओमप्रकाश गुप्ता द्वारा सम्पादित 'अमर कहानी' व 'रंग महल' पत्रिका में प्रकाशित हुई। इस पहली सफलता पर जहाँ एक ओर प्रसन्नता हुई वहीं स्थानीय लोगों की व्यंग्योक्ति व उपेक्षा को भी सहना पड़ा। इन प्रहारों को सहते हुएउनका संकल्प और भी दृढ़ होने लगा, इसी बीच दादी का देहांत हो जाने से इन्हें पहली बार निराश्रित होने का एहसास हुआ। नौकरी के लिए किए गए सारे प्रयास भी असफल रहे।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

अत्यधिक निराश और असहाय होने के बाद सितम्बर 1951 ई. में अपने छोटे भाई व बहन को असहाय छोड़कर अत्यधिक पीड़ा लिए वे घर से भाग निकले। भाई बहन का यह दुःख था कि दोनों ही अंधकार में भविष्य में भटकते रहेंगे। अपनी इस पीड़ा को उन्होंने इस प्रकार व्यक्त किया ''मेरे आगे तुम नहीं बिलख रही हो, बल्कि वह अभागिन बहिन बिलख रही है, जिसे मैं अपर प्राइमरी भी नहीं पढ़ा पाया, मेरा वह भाई बिलख रहा है, जो अशिक्षा के अंधकार से ही अभिशप्त होकर भटक गया।''[5]

ठोकरें खाते-खाते दिल्ली से इलाहाबाद, इलाहाबाद से दिल्ली फिर मुजफ्फरनगर जाकर भी सफलता नहीं मिली तो इन्होंने बंबई जाने का संकल्प ले लिया। छोटी-छोटी कविताओं को लिखकर जो थोड़ा बहुत पारिश्रमिक मिला था, उसे लेकर बंबई को रवाना हो गए। धन-वैभव से परिपूर्ण उस नगरी में शरण मिली भी तो फुटपाथों पर, जिसका वर्णन मटियानी जी ने इन शब्दों में किया है - ''बम्बई की फुटपाथों का आजीवन ऋणी रहूँगा, उनमें फिर-फिर कर मैंने बिखरे, चने व रोटियों के बासी टुकड़े पाए, जिन्होंने मेरे भूखे पेट को राहत दी, उन्हीं फुटपाथों पर सोने के अपराध में जब 'चैपन' के अन्तर्गत पुलिस चैकी में पहूँचा तो मुझे हिन्दुस्तान के उन बेटों का साहचर्य मिला, जो पूँजीवादी व सरकारी शोषण के मकड़जाल में फँसे हुए गुनाहगार बनने को मजबूर हैं।''[6]

बम्बई मे रहते हुए उन्होंने समाज के दलित व घृणित वर्ग को बहुत नजदीक से देखा तथा कुलियों, मज़दूरों, भिखमंगों, अपंगों, मजबूर व शोषितों एवं उठाईगिरों के साथ जीवनयापन भी किया। यहीं सच्चाई उनके साहित्य का अभिन्न अंग बन गयी। पेट की क्षुधा शांत करने के लिए पुलिस चैकियों में जानबूझ कर जीवन व्यतीत किया। कभी-कभी तो उन्हें अपना खून बेचकर भी क्षुधा पूर्ति करनी पड़ी। लगातार जटिल समस्याओं से घिरे रहने पर भी वे लेखनकार्य से निरन्तर जुड़े रहे। शारीरिक कमजोरी मानसिक अशांति, आर्थिक संकट ने एक साहित्यकार के संकल्प को तोड़ डालना चाहा मगर संघर्ष अटल रहा। कभी-कभी स्थानीय लोगों की तिरस्कारपूर्ण वे व्यंग्योक्तियाँ भी सुनने को मिली कि 'जुआरी व बूचड़ का भतीजा क्या कविता लिखेगा या पहाड़ी लड़के तो जूठे-बर्तन ही साफ कर सकते हैं।' साहित्य सृजन नहीं, मन को कटोचती थी और उन्हें अपना अस्तित्व ही समाप्त होता सा लगता था। इसी कारण उन्होंने अपनी जीवन-लीला समाप्त करने का निर्णय लिया और मृत्यु की ओर बढ़ते कदमों के साथ-साथ अपने आरम्भ से अब तक की मधुर व कड़वी स्मृतियों को याद किया तो कड़वी व संघर्षमयी स्मृति विलुप्त सी हो गयी और मधुर स्मृतियाँ एक खुली किताब की तरह सामने आती गयीं।

बाल्यकाल में गाँव का जीवन पशु-पक्षी, खेल-खलिहान, नदी-झरने, हिमाच्छादित पहाड़, चीड़ व देवदार के घने जंगल, मंदिर-पर्व, त्योहार, रामलीला, अध्यापकों के स्नेह के बीच गुजरा समय, मन में भी विचार उठा कि उन्हीं दलितों एवं शोषितों

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

के जीवन को नया आयाम देने के लिए संघर्ष करूँ तथा शोषण मुक्त समाज के स्वप्न को साकार करने के लिए कलम के हथियार से लड़ाई लड़ूँ।

इस तरह विभिन्न परिस्थितियों में स्वयं को तोलकर आत्म-बोध प्रबल हुआ और साहित्यकार बनने के संकल्प को पुनः दोहराया। अपने जीवन में नवीनता लाने के लिएनयी विचारधारा को जन्म दिया। जीवन की महानतम् त्रासदियों विषमताओं से उलझकर भी साहस को बनाए रखा और श्री कृष्णपुरी चाट हाउस में जीवन-यापन के लिए कार्य करना प्रारम्भ किया, उसी मनोदशा का उल्लेख करते हुए वे लिखते हैं- ‘‘मैं अकेला रह गया था। स्टेशन पर मज़दूरी करने की हिम्मत नहीं होती थी सो, वर्ली रोड के चाट हाउस पर नौकरी पर लग गया।[7]

चैदह घण्टे कार्य करने की थकान लेखन कार्य को प्रभावित करती थी, फिर भी कुछ समय निकालकर कविताएँ व कहानियाँ लिखना जारी रखा और साढ़े तीन वर्ष तक इसी चाट हाउस में कार्य करते रहे। इसी बीच उनकी कविताएँ ‘धर्मयुग‘ पत्रिका में प्रकाशित होती रही। ‘कबूतरखाना‘ व ‘बोरीबली से बोरीबंदर तक‘ उपन्यासों की रचना स्थान यहीं श्री कृष्णपुरी चाटहाउस था, यहाँ रहते हुए उन्होंने दलित वर्ग, मवाली, चोर उचक्कों व वेश्याओं के जीवन को इतनी गहराई से देखा कि उन्हें जीवन से आत्मीयता हो गयी और इसी आत्मीयता को सार्थक बनाने के लिए इन लोगों के दयनीय जीवन को साहित्य का विषय बनाया। कुछ स्थिति संभलने पर बम्बई से अपने गाँव बाड़ेछीना वापस आ गए। यहाँ पर भी घनी साधना चलती रही। अब वे प्रायः गर्मियों में यहीं रहते तथा जाड़ों में दिल्ली या बम्बई।

सन् 1957 ई. में मटियानी जी के चाचा ने उनका विवाह अल्मोड़ा जनपद के तलाड़ गाँव के नाथसिंह की पुत्री नारायणी देवी के साथ कर दिया। मटियानी जी उन्हें ‘नीला’ नाम से पुकारते थे, इनकी पत्नी एक सामान्य भारतीय नारी है। धार्मिक प्रवृत्ति की होने के साथ-साथ वे एक पतिपरायण महिला है। अतिथि सत्कार करना, प्रसन्नचित रहना, परिवार के कत्र्तव्यों के प्रति निष्ठावान होना, उनके व्यावहारिक गुण हैं।

मटियानी जी की सेवा का पूर्ण उत्तरदायित्व उन्हीं पर था, जिसे वे पूरी लगन व आत्मीयता के साथ निभाती थीं। मटियानी जी के साथ विषम परिस्थितियों में भी उनकी पत्नी ने हमेशा उन्हें प्रोत्साहित किया तथा चेहरे एवं व्यवहार से भी दुःख को महसूस न होने दिया। इसी बात को रेखांकित करते हुए- ‘‘ डॉ. गिरिराज किशोर कहते हैं कि मटियानी जी की ज़िंदगी का नीला जी धनात्मक बिन्दु है।’’[8]

श्रीमती नीला मटियानी सीधी-सादी सामान्य भारतीय महिला हैं। वे मृदुभाषिणी, कत्र्तव्यनिष्ठ व अपार धार्मिक प्रवृत्ति के गुणों से सम्पन्न महिला हैं। उन्होंने अपने वैवाहिक जीवन में हर सुख-दुःख में सदैव मटियानी जी का साथ दिया है - डॉ.

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

शेखर पाठक उन्हें सामान्य पर असाधारण महिला मानते हुए लिखते हैं - ‘‘बाड़ेछीना से अल्मोड़ा, दिल्ली इलाहाबाद और हल्द्वानी हर जगह भाभी उनके साथ रही। एक सम्पूर्ण अद्र्धागिंनी उनकी बौद्धिक, साहित्यिक मोनोटाॅनी को तोड़ने वाली और शायद दुनिया में अकेली जिससे बहस करने में स्वयं शैलेश घबराते थे इसलिए कि शैलेश के बनने में नीला भाभी ने अपने को होम दिया था।‘‘[9]

दुर्भाग्यवश 1963 ई. में इन्हें अल्मोड़ा शहर में स्त्री-वंचना का शिकार होना पड़ा, जिससे इनके अस्तित्व के समाप्त होने की स्थिति पैदा हो गयी। इस प्राणघाती संकट से जैसे-तैसे वे बच निकले। इस संकट से उनके अन्दर के साहित्यकार को अद्भुत बल व नवीन दिशा मिली। इस संदर्भ में स्वयं लिखते हैं - ‘‘अन्न की तलाश में बम्बई और प्रेम की तलाश में अल्मोड़ा में न जाने कितनी बार मौत के ठीक सामने चारों ओर से निरूपाय सिर्फ संवेदना और चैतन्य के बलबूते पर अस्तित्व का संकट वहन करने की चुनौती में नितान्त अकेला छोड़ दिया है। उसे भुक्त-भोगी ही जान सकता है कि बुभुक्षा और स्त्री-वंचना की यातानाओं में अकेला पड़ना ही अपने अस्तित्व में नंगा पड़ना है, लेकिन अपने अस्तित्व के इस नंगेपन से ही लेखक को उसकी भाषा ही उतारती है।‘‘[10]

उन्होंने इलाहाबाद जाने की खुशी व उमंग-ललक में यह लघु उपन्यास सिर्फ तीन दिन में पूरा कर दिया था। पन्द्रह रूपए में ‘दोराहा‘ उपन्यास बेचकर वे अपने गन्तव्य इलाहाबाद को चले। वहाँ भूखे रह ‘माया‘ कार्यालय पहुँचे। इलाहाबाद में श्री शमशेर बहादुर सिंह के साथ 10-11 दिन रहे। शमशेर बहादुर सिंह उन्हें प्रयाग के एक सुविख्यात प्रकाशक और साहित्यिक के पास लेकर गए और ‘किसी भी तरह‘ के काम की व्यवस्था कर देने का आग्रह किया और उन्होंने मटियानी जी को लीडर प्रेस की ‘कैन्टीन‘ में रखवा दिया। दिन भर कैन्टीन में प्लेटें धोने और बर्तन मलने का काम करते रहे। मटियानी जी द्वारा एक प्लेट टूट गयी थी, अतः सायं ही उन्हें भूखा-प्यासा निकाल दिया गया, साथ ही दिन भर की मज़दूरी भी नहीं दी, वे उस रात्रि इलाहाबाद की फुटपाथों पर विक्षिप्त की तरह भटकते रहे और जब रात-भर सर्दी से ठिठुरते हुए एक मकान के बरामदे के अँधेरे कोने में दुबक गए, तो रात में बाहर आए मकान मालिक ने उन्हें चोर की पद्वी देकर बगल में स्थित थाने में पहुँचा दिया। वहाँ के सहृदय पुलिस कर्मियों ने उनकी आपबीती सुन उन्हें चारपाई, ओढ़ने को कंबल तथा कुछ खाने को दिया। प्रातः समझाते हुए किसी घर या होटल में नौकरी ढूँढने को कहा और साथ ही चवन्नी भी दी, सन् 1957 में जिसकी कीमत बहुत थी। मटियानी जी के लिए यह सामान्य अनुभव नहीं था वह अंधेरे गढ़े में गिरने से बचाने वाली रोशनी थी। बाद में जीवन में उसकी भूमिका रही कि बिना रोशनी का आदमी ढूँढना कठिन है।

‘‘आदमी स्वयं में ही अगाध है, जो अपने को जितना पा सके, जिसके पल्ले जितना पड़ जाए।‘‘[11] मटियानी जी पुनः शमशेर बहादुर सिंह के पास पहुँचे। शमशेर बहादुर सिंह ने एक पत्र लिखकर कि ‘इस युवक में बीज से वृक्ष बनने की अपार सम्भावना

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

है' यशस्वी महाकवि पंत जी के पास भेजा कि तुम्हें वहाँ आश्रय मिल जाना सम्भव भी हो सकता है और श्रेयस्कर भी, किन्तु वहाँ भी निराशा ही मिली। उनका कहना था कि - ''हमारे पास तो कोई नौकरी नही, एक पहाड़ी छोकरा पहले भी रखा था, वह बेईमानी करके भाग गया।'' मटियानी जी के शब्दों में - ''और मैं महाकवि का जीवन भर ऋणी रहूँगा कि उन्होंने मुझमें यह आत्म-बोध जागृत किया था कि साहित्यकार बनने का संकल्प दुर्धर्ष जीवन-संघर्षों के कंकरीले पथरीले दुर्गम मार्गों पर होते हुए आगे बढ़ने पर ही पूरा होगा। बड़े साहित्कारों की शरण में जीने पर नहीं? वह दिन है और आज का दिन है - ''मैं फिर कभी किसी साहित्यकार की शरण में नहीं गया कि मुझे आश्रय मिले। उसी दिन यह पर्दा भी मेरी आँखों पर से हटा कि महान साहित्यकार महान मनुष्य भी हुआ करते हैं। उसी दिन यह आस्था भी मुझे मिली कि साधारण व्यक्तियों के हृदय में कई महान साहित्यकारों की अपेक्षा कहीं अधिक संवेदना, सौम्यता और मानवीय सद्भावनाएँ होती हैं।''[12]

उसी दिन मटियानी जी ने इलाहाबाद छोड़ने का निर्णय लिया, वे स्टेशन तक आए। वहाँ प्रयाग उच्च न्यायालय के एक वकील श्री नाथू राम सिंहल उन्हें मुजफ्फरनगर ले आए। उनकी पत्नी श्रीमती अरूंधती सिंहल सन् 1952 की एम.पी. का चुनाव मुजफ्फरनगर से लड़ रही थी। वहाँ महीनों उनकी नौकरी करते रहे, जिसमें जूठे बर्तन मलने, झाड़ू लगाने से लेकर पेटीकोट-ब्लाउज धोने तक का कार्य शामिल था। साथ ही चुनाव के पोस्टर लगाने का काम भी किया। इसी बीच मुजफ्फरनगर से प्रकाशित होने वाली साप्ताहिक पत्रिका 'नया संसार' में इनकी एक कविता प्रकाशित हुई। यहीं पर रहते हुए 'नया संसार' पत्रिका के सम्पादक श्री शांतिप्रसाद जैन ने इन्हें पत्रिका के प्रूफरीडिंग तथा कविता लेखन कार्य के लिए पचास रूपए मासिक पर रख लिया। ये इस पत्रिका में सरकार की आलोचना व्यंग्यात्मक रूप में 'वक्र दृष्टि' शीर्षक से लिखते रहे। मुजफ्फरनगर में रहते हुए उन्होंने वहाँ की नगर पालिका के तत्कालीन कार्पोरेटर श्री मुरारी लाल सोलन के घर पर भी काम किया, सन् 1952 के जुलाई मास में ये पुनः दिल्ली चले आए। दिल्ली में भी ये अधिक समय तक नहीं टिक पाए, अगस्त 1952 में इन्होंने बम्बई जाने का विचार किया। टिकट खरीदने के लिए पर्स में बिल्कुल भी पैंसे नहीं थे। इन्होंने दैनिक हिन्दुस्तान के तत्कालीन सहायक श्री राम सिंह के साथ क्रप्टियर मेल में बिना टिकट बम्बई के लिए प्रस्थान किया जहाँ, उनका झोला-झंडा लेकर साथी भी खिसक लिया, तथा उनका गरम कोट भी ठग लिया गया। यह उनके जीवन के एक नए दौर की शुरुआत थी, तो दूसरी ओर नीचे फुटपाथ था, जो अब उनकी शरणस्थली थी। मटियानी जी के शब्दों में - ''और मुझ यह स्वीकारते संकोच नहीं कि बंबई की फुटपाथों ने, इन फुटपाथों पर पलने-पनपने वाले कुलियों, मज़दूरों, भिखमंगों, उचक्कों, उठाईगीरों और गुण्डों ने मुझे जो आत्मीयता दी, जो सहारा दिया और श्रम करते हुए जीने की जो दिशा-दृष्टि दी वह साहित्यकारों के यहाँ उपलब्ध नहीं होती, उन साहित्यकारों के यहाँ जो 'मानवेतर साहित्यकार' यानी महान साहित्यकार होते हैं।''[13]

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

वे कभी बम्बई की फुटपाथों की खाक छानते हुए कभी बिखरे हुए चने खाते, तो कभी रोटी के बासी, फेंके हुए टुकड़ों से अपनी उदर पूर्ति करते। कई बार मात्र पेट भरने व आश्रय पाने के लिए संदिग्धावस्था में घूमते, जिससे पुलिस द्वारा पकड़ लिए जाते थे। जिससे वे कुछ समय के लिएपेट की भूख को शांत करने की चिन्ता से मुक्त हो जाते थे। विलेपारले की एक जेल में उन्हें ज्ञात हुआ कि भूख की आग को शांत करने का एक और रास्ता प्रचलित है - अपना रक्त बेचना। मटियानी जी ने 10 रू0 प्रति बोतल के हिसाब से उन्होंने पाँच बार अपना रक्त बेचा। जिसमें 2 रूपए प्रति बोतल दलाल के हिस्से में चले गए थे, उन्हें अपनी ज़िंदगी कुत्ते से भी बदतर लगती थी - ‘‘फिर से फुटपाथों पर टुकड़े, बीनना, मंदिरों में बटने वाली पूरियों के लिए भिखारियों की संगत में बैठना, रेलवे स्टेशनों के फूट-स्थलों के कचड़े के डिब्बों से बीनकर जूठे फल खाता हुआ अपनी उम्र को काटता रहा यह एक पराकाष्ठा थी कि जहाँ तक पहुँचकर मेरे जीवन की सीमा समाप्त हो जानी चाहिए थी, मगर ऐसा नहीं हो पाया कि इस पराकाष्ठा तक पहुँचकर भी, न जाने क्यों, मेरी यह आशा एकदम समाप्त न हो पायी थी कि कभी न कभी इस स्थिति से उबर जाऊँगा।‘‘[14] और इसी क्रम में ‘‘यह संकल्प लेकर कि अगर अपने स्वप्न-संकल्पों को पूरा करना है, तो एक साधारण मजदूर की हैसियत से जीने की दीक्षा लेनी होगी, को अपने हृदय में ले ली।‘‘[15]

‘धर्मयुग‘, ‘सरस्वती‘, ‘प्रवाह‘, ‘बालभारती‘ आदि पत्रिकाओं में उनकी रचनाएँ प्रकाशित होती रहीं। ‘‘सन् 1956 ई. को उत्तरार्द्ध में वे घर लौट आए। इस बीच माता-पिता के न होने के कारण इनकी छोटी बहिन हीरा का विवाह 13 वर्ष की अल्पायु में ही दूसरे चाचा-चाची द्वारा कर दिया गया।‘‘[16] मटियानी जी को समय-समय पर अनेक पुरस्कारों से भी नवाजा गया। सर्वप्रथम 1960 ई. में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा इनके प्रसिद्ध उपन्यास ‘बोरीबली से बोरीबंदर तक‘ के लिएतथा कहानी ‘महाभोज‘ पर हिन्दी संस्थान द्वारा उत्तर प्रदेश सरकार ने 2500 रूपए का प्रेमचंद पुरस्कार दिया। 1974 ई. में कहानी प्रतियोगिता में ‘सुख की तलाश‘ (बिता भर दुःख) के लिए 500 रूपए का पुरस्कार मिला। 1977 ई. में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा अन्य श्रेष्ठ साहित्यकारों के साथ साहित्यिक सेवाओं के लिए 2500 रूपए का पुरस्कार प्रदान किया गया। वे सन् 1984 के ‘रेणु‘ पुरस्कार से सम्मानित किए गए थे तथा 1989 ई. में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ द्वारा संस्थान सम्मान मिला। देवरिया में केडिया ब्रादर्स द्वारा 25,000 रूपए का शारदा सम्मान दिया गया। 1994 ई. में इन्हें कुमाऊँ विश्वविद्यालय द्वारा डी.लिट. की मानद उपाधि प्रदान की गयी। 1994 ई. में मोहनलाल केडिया हिन्दी साहित्य न्यास नई दिल्ली द्वारा एक लाख रूपए का साहित्य सम्मान मिला, जो कि हिन्दी कथा-साहित्य का अपने अमूल्य योगदान से समृद्ध करने तथा मौलिक चिन्तन द्वारा साहित्य की श्री वृद्धि करने के लिएदिया गया। 1994 ई. में ही साहित्यिक-सांस्कृतिक अवदान के लिए‘अखिल भारतीय साहित्य परिषद्‘ द्वारा पुरस्कार दिया गया। 1997 में दो लाख रूपए का ‘लोहिया साहित्य सम्मान’ मिला। इस पुरस्कार को लेने मटियानी जी अस्वस्थता के कारण नहीं जा सके थे, तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री नरसिन्हा राव द्वारा 1997 में

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

25,000 रूपए की धनराशि पुरस्कार स्वरूप दी गयी। 1997 ई. में ही उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा आवासीय सहायता हेतु 2,50,000 रूपए की धनराशि दी गयी।

मटियानी जी को 20 अगस्त 2000 ई. को नागरिक सम्मान हेतु जिला सहकारी बैंक नैनीताल (उ.प्र.) के द्वारा आयोजित सभागार में आमंत्रित किया गया तथा नागरिक सम्मान के रूप में 25,000 रूपए की धनराशि तथा अभिनंदन-पत्र भेट किया गया। यद्यपि पैसा और पुरस्कार मटियानी जी खुद ठुकराते रहे, लेकिन सम्मान और प्यार मटियानी जी को भरपूर मिला। परिस्थितिवश उनकी विद्यालयी शिक्षा सीमित, लेकिन हर विषय पर पैनी पकड़ एवं प्रखर तार्किक शक्ति थी, मटियानी जी ने सिद्ध कर दिया था कि जन्मजात लेखक के लिए स्कूल-कॉलेज की पढ़ाई और डिग्रियाँ विशेष अर्थ नहीं रखती हैं। ‘‘मसि कागद छुयो नही‘‘ के कबीर-सी प्रतिभा, फक्कड़पन, निराला की सी ओजस्विता, प्रखरता, ओघड़पन, अक्खड़, उपेक्षा विषम आर्थिक धनाभाव आदि इनके जीवन में जीवनपर्यन्त व्याप्त रही। यद्यपि दिल्ली के कुछ साहित्यकार मित्रों के द्वारा परस्पर एकत्रित 50 हजार रूपए की सम्मान राशि को इन्होंने अस्वीकार कर दिया। समयान्तराल में अस्वस्थता के समय आर्थिक विपन्नता से वे जूझते रहे, जो व्यक्ति अपना नुकसान सहकर भी अपने सिद्धान्तों को सहेजता रहे। वर्तमान समय में विरले ही मिलते हैं। जीवन-पर्यन्त इतनी विपरीत परिस्थितियों में भी उन्होंने अपने लेखक बनने का स्वप्न-सकंल्प पूरा किया ।

आलोचकों के लिए मटियानी जी के प्रति रवैया नितान्त उपेक्षापूर्ण रहा। उन पर वामपंथी होने के आरोप लगते रहे। श्री दामोदरदत्त दीक्षित के अनुसार - ‘‘उन्हें आम आदमी से शहरे जुड़ाव और राष्ट्र, संस्कृति, धर्म और हिन्दुत्व की सही अवधारणा में कोई विरोधाभास नहीं दिखता था, वह न वामपंथी थे, न दक्षिणपंथी वह तो सत्यपंथी थे।‘‘[17]

मटियानी जी के लिए इलाहाबाद प्रवास का 80 के दशक का उत्तरार्द्ध का समय कष्टप्रद होता चला गया, ‘टाइम्स आफ इंडिया‘ के प्रकाशन समूह के साथ उनकी लम्बी कानूनी लड़ाई हुई, जिसमें उन्हें पराजय का सामना करना पड़ा। एक पत्रिका ‘धर्मयुग‘ में छपी समीक्षा में मटियानी जी का नाम गलत तरीके से घसीटकर उनकी छवि धूमिल करने की कोशिश की गयी, धर्मवीर भारती के प्रति उनके मन में बड़ा सम्मान था, इसलिए इस सम्बन्ध में अपना स्पष्टीकरण उन्हें भेजा, परन्तु उन्होंने इसे तवज्जो नहीं दी। इसी तरह इलाहाबाद में मटियानी जी ने आवास-विकास का मकान लेने हेतु किश्तों में पैसा देना आरम्भ किया। वे मकान के साथ की भूमि भी चाहते थे, जो विवाद का कारण बना और पैसा दिए जाने के उपरान्त भी उस घर पर कब्जा नहीं मिला। वह मकान मटियानी जी के जीवित रहते विवादित ही रहा। 1965 ई. से 1992 ई. तक वे लगातार इलाहाबाद में ही सपरिवार जीवन व्यतीत करते हुए साहित्य साधना में लीन रहे। मटियानी जी के अनुसार भू-माफियाओं

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

की अहम् भूमिका के चलते उनके होनहार युवा पुत्र मनु (मनीष) की, जिसने प्रतियोगी परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली थी, 13 अप्रैल 1992 के दिन बम फेंककर निर्मम हत्या कर दी गयी। मटियानी जी के उत्तरोत्तर टूटने की प्रक्रिया तो जारी थी।

हाईकोर्ट, फिर सुप्रीमकोर्ट तक की कानूनी लड़ाई, साथी लेखकों के द्वारा उपेक्षा, आलोचना, मकान व भूमि का विवाद, 13 अप्रैल 1992 के मनहूस दिन युवा पुत्र की असामाजिक तत्वों द्वारा दी गयी बर्बर हत्या ने उनके टूटने व बिखराव को एक दिशा दे दी, जिससे वे अंतिम सांस तक उभर नहीं पाए, वे स्वयं अपने साथियों से कहा करते थे, उस पिता की पीड़ा अपरम्पार है, जिसके बूढ़े कंधे पर उसके युवा पुत्र का जनाजा निकलता हो, 7 जुलाई 1995 को उन्हें कलकत्ता में मनोविक्षिप्ति का दौरा पड़ा और उनकी विक्षिप्तिता का अन्तहीन सिलसिला चलता रहा।

इलाहाबाद में मटियानी जी की अस्वस्था के चलते उनका परिवार हल्द्वानी आ गया। मानसिक विक्षिप्तता के बावजूद अंतिम क्षणों तक तन-मन से क्षीण मटियानी जी की लेखनी चलती रही ‘अकार‘ में बहुत लंबी - ‘नदी किनारे का गाँव‘ और ‘हंस‘ में ‘उपरांत‘ वही उनकी अंतिम कहानी थी।

विक्षिप्तता में ही दिल्ली के एक मानसिक चिकित्सालय में 24 अप्रैल 2001 को मटियानी जी का देहावसान हो गया। उनके पार्थिव शरीर को हल्द्वानी लाया गया, जहाँ चित्रशिला घाट पर नम आँखों ने उन्हें अंतिम विदा दी व देखते-देखते हिन्दी साहित्य जगत के इस कालजयी शब्द-शिल्पी की देह अग्नि की लपटों के मध्य पंचतत्त्व में विलीन हो गयी।

सन्दर्भ:

1. शैलेश मटियानी - डोटी प्रदेश की लोककथाएँ (आमुख) पृ.4
2. शैलेश मटियानी - लेखक की हैसियत से - पृ.33
3. वही - पृ.117
4. वही - पृ.27
5. शैलेश मटियानी - एक मंगल द्वीप - पृ.84
6. शैलेश मटियानी - मेरी तैंतीस कहानियाँ- पृ.18
7. शैलेश मटियानी - दूसरों के लिए- पृ.134
8. शैलेश मटियानी - मटियानी की कहानियाँ (जख्मों की पहचान) पृ.32
9. शेखर पाठक - शैलेश मटियानी के मायने - पहाड़ 2001 अंक 13, पृ.12
10. शैलेश मटियानी - लेखक की हैसियत से - पृ.26-27

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

11. शैलेश मटियानी - मुड़-मुड़ कर मत देख - पृ.24
12. शैलेश मटियानी - मेरी तैंतीस कहानियाँ (भूमिका भाग) पृ.17, 18
13. वही - (भूमिका भाग) पृ.18
14. वही - पृ.20
15. शैलेश मटियानी - मुड़-मुड़ कर मत देख - पृ.155
16. शेखर पाठक - शैलेश मटियानी के मायने - पहाड़ 2001 अंक 13, पृ.12
17. दामोदर दत्त दीक्षित - ऊँचे पाये के रचनाकार - पहाड़ 2001 अंक 13, पृ.209